IJNRD.ORG ISSN : 2456-4184
INTERNATIONAL JOURNAL OF NOVEL RESEARCH AND DEVELOPMENT (IJNRD) | IJNRD.ORG
An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

# कुमाउनी लोकगीतों में जैवविविधता

डा0 डी0 सी0 पाण्डेय[1]
सहा0 प्राध्यापक : हिन्दी
राजकीय महाविद्यालय हल्द्वानी षहर
किषनपुर–गौलापार (नैनीताल) उत्तराखण्ड़

डा0 एस0 सी0 जोषी[2]
सहा0 प्राध्यापक : जन्तु विज्ञान
राजकीय महाविद्यालय हल्द्वानी षहर
किषनपुर–गौलापार (नैनीताल) उत्तराखण्ड

ब्वततमेचवदकपदह ।नजीवनतरू

डा0 डी0 सी0 पाण्डेय[1]
सहा0 प्राध्यापक–हिन्दी
राजकीय महाविद्यालय हल्द्वानी, षहर
किषनपुर–गौलापार (नैनीताल)
9411319412

डा0 एस0 सी0 जोषी[2]
सहा0 प्राध्यापक : जन्तु विज्ञान
राजकीय महाविद्यालय हल्द्वानी, षहर
किषनपुर–गौलापार (नैनीताल)
9720250733

## सारांश :

किसी भी प्राकृतिक प्रदेश में पायी जाने वाली जंगली अथवा पालतू जीव–जन्तुओं एवं पादपो की प्रजातियों की बहुलता या जैवविविधता ;ठपव.कपअमतेपजलद्ध के विषयों को लोकगीतों में बिना किसी पूर्वाग्रह के निर्मलतापूर्वक देखा, सुना–समझा जा सकता है। अतीत के करोड़ों वर्षों के दर्म्यान अनवरत सक्रिय रहने वाली विकास की जैविक प्रक्रिया की देन है जैव विविधता। गायन भी मनुष्य हृदय की स्वाभाविक प्रवत्ति है। गाना–गुनगुनाना मानव ने प्रकृति से ही सीखा है। आनन्द की अपरिसीम भावभूमि पर अथवा व्यथा की विषादमय घड़ियों में गीतों की रचना हुई होगी। मानव मन समीपस्थ वस्तुओं–प्राणियों के प्रति स्वाभाविक रूप में आसक्त होता है। कलरव करते खगकुल ;*ठपतकेद्ध*, चिंघाडते गजराज ;*स्मचींदजद्ध*, दहाड़ते वनराज ;*स्पवदद्ध*, पुश्पित, पल्लवित, कुसुमित पुष्पलताए ;*थ्सवूमतेद्ध*, बादलों की उमड़–घुमड़, मन्द पवन, गुनगुनी धूप, शीतल अविरल सरिताएँ, भवरों की गुनगुनाहट और भी न जाने क्या–क्या और कितने रूप–स्वरूप हैं प्रकृति के ? इन्ही समस्त बिन्दुओं को लोकगीत अपनी भावभूमि पर उतार कर हमारे सम्मुख एक नवीन वैचारिक तारामण्डल प्रतिबिम्ब करते हैं। कुमाउनी लोकगीतों में यही जैवविविधता की मिठास घुली–घुली सी जान पड़ती है। यह उस जंगली वृक्ष के समान है जिसकी जड़ें अतीत की गहराइयों को अपने में समेटे रहती है। वैदिक संस्कृति व लोक संस्कृति का अद्भुत मणिकांचन संयोग कुमाउनी लोकगीतों की गौरवशाली परम्परा का प्रमुख आकर्शण है। कुमाउनी लोकगीतों की पहचान ही जैवविविधता की अपार–अकूत समृद्ध सम्पदा का सहज चित्रण है।

## बीज शब्द :

जैवसम्पदा, लोकसाहित्य, लोकगीत, कुमाउनी, न्यौली, वानस्पतिक सम्पदा।

## प्रस्तावना :

श्रीरामचरितमानस में भक्त शिरोमणि कविकुलगुरु चूड़ामणि तुलसीदास जी ने लोकसाहित्य को लोकवेद के समक्ष यूँ ही प्रतिष्ठित नहीं किया होगा। "सरजू नाम सुमंगलमूला, लोक वेदमत मंजूल कूला।" अर्थात् 'इस कविता रूपो नदी जिसका नाम सरयू है, जो सम्पूर्ण सुन्दर मंगलों की जड़ है। लोकमत और वेदमत इसके दो सुन्दर तट हैं।' यही लोकसाहित्य समाजोपयोगी जीवनदायिनी ज्ञान अपने आँचल में सहेजे रखता है, जो कि मौखिकीय परम्परा से पीढ़ी दर पीढ़ी एवं एक स्थान से दूसरे स्थान को अनुप्रसारित होता चलता है। इसी कारण लोक साहित्य को मौखिक परम्परा के साहित्य के रूप में भी जाना जाता है। चूँकि अपेक्षाकृत लिखित–प्रमाणिक स्वरूप में भी इसकी उपलब्धता न होने के कारण इसे विज्ञानसम्मत अनुसंधान हेतु अधिकृत स्रोत–सामग्री की दृष्टि से उतना सम्मान प्राप्त नहीं होता दिखता है, तथापि यह लोक का दिशा–निर्देशन, क्षेत्र विशेष की पारिस्थितिकीय अध्ययन में प्रचुर आधार उपलब्ध कराता है। लोकसाहित्य पर्यावरणीय दृष्टि से किसी क्षेत्र विशेष की जैव विविधता यथा पेड़–पौधे, जीव–जन्तु, खगकुल, कीट–पतंगें, नदी–नाले, झील, धारे, नाले, पोखर, तालाब; चाल–खाल, पर्वत–शृखलाएँ, वानस्पतिक विविधताओं आदि को परम्परा, मान्यता के साथ मनोरंजन की चासनी में तर कर इस तरह प्रस्तुत करता है कि लोकरंजन के साथ लोक–चेतना का ज्ञान भी इससे प्राप्त होता है।

## मूल शोधालेख :

मध्य हिमालय के सुप्रसिद्ध कुमाऊँ क्षेत्र में प्रचलित–विस्तारित कुमाउनी संस्कृति भी अपनी कतिपय मौलिकता के साथ विशिष्ट पहचान रखती है। लोकसाहित्य के अन्तर्गत लोकगीतों में व्यापक दार्शनिक दृष्टि व पर्यावरणीय चेतना किसी क्षेत्र–विशेष के लोकगीतों की अविरल सरिता की धारा की तरह कभी नीम–नीम कभी शहद–शहद के सदृश कभी तीव्रगामी कभी मन्दगामी प्रवाहमान रहती है। कृत्रिम बुद्धिमता, उपकरणीय अधिगमता तथा आंकड़ों के विश्लेषण से सुसज्जित आज की जीवनशैली में स्वसंस्कृति संरक्षण, स्वाध्याय एवं आत्मपुनम्ल्यांकन की भावना भी गहनेत्तर होती जा रही है। क्योंकि भूमंडलीयकरण के अंधड़ ने न जाने कितनी क्षेत्रीय संस्कृतियों के अस्तित्व को चुनौती दी है ? उत्तराखण्ड के मानसखण्ड की लोकसंस्कृति के अन्तर्गत लोकसाहित्य के बहुचर्चित शीर्षक लोकगीतों के संन्दर्भ में कला–संस्कृति एवं ज्ञान–विज्ञानानुरागियों के लिए यह सदा से ही रूचिकर विषय रहा है कि हमारे लोकगीतों में सृष्टि के प्रति क्या दृष्टि रही है ?

सजीव प्राणियों के मध्य परस्पर सार्थक्यता तथा प्रकृति के साथ सन्तुलित पारिस्थितिकीय सामन्जस्य ही जैवविविधता है। लोकगीतों के माध्यम से मानव जीवन के हितों का संरक्षण का संदेश देते कुमाउनी लोकगीतों में जो प्राणिजगत की प्रत्येक प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं उसे इसमें बहुत सहजता के साथ चित्रित किया जाता रहा है। जहाँ शास्त्रीय नियमों की कोई विशेष परवाह न कर सामान्य लोक व्यवहार के उपयोग में लाने के लिए मानव अपने आनन्द की तरंग में अपनी भावनाओं को अभिभूत होकर व्यक्त करें वही लोकगीत है, जिसमें कि रस, छन्द, अलंकार भाषिक चमत्कार, मिथक, बिम्ब प्रतीक, फैंटेसी, रूपक आदि तत्व यत्नसाधित न होकर स्वतःस्फूर्ति सहित गतिमान रहते हैं, वही लोकगीत हैं। काली नदी के पूर्व की ओर नेपालखण्ड और पश्चिम की ओर कूर्मांचल (कुमांऊँ, नंदाकोट एवं रामगंगा) का विस्तृत क्षेत्र है। [01]

लोकहृदय के उदगार कुमाउनी लोकगीतों में यहाँ की सांस्कृतिक, स्थानीयता तथा भौगोलिक, लोकाचारों की झलक मिलती है। कृषि–पशु, जीव–जन्तु, जल–थल तथा नभचर पशु पक्षियों सहित प्रकृति के विविध उपादानों को इन लोकगीतों में सुना–समझा जा सकता था। कुमांउनी लोकगीतों को सामान्यतया देवी देवताओं व पूजा के गीत, संस्कार गीत, विवाह गीत, ऋतु गीत, कृषि–गीत, शृंगार–प्रेम–विरह गीत, मेलों उत्सवों के गीत, होली, न्यौली, झोड़े, चाँचरी, छपेली, बैर, भगनौल, राष्ट्र–राज्य एवं बालगीत आदि अनुभागों में वर्गीकृत किया जा सकता है। इनमें कदम–कदम पर जैव विविधता के मनोहारी दर्शन होते हैं। प्रसिद्ध लोकगीत 'यो बाटो' का जोड़ देखिए जिसे स्वर दिया था स्व. रमेश चन्द्र जोशी ने–

"यों बाटो का जान्या होला, सुरा–सुरा देवी को मंदिरा।
जाइ फुलि चमेलि' फुलि दैंणा' फुलि जैता
तेरो बाटो चानैं–चानैं उमर काटो मैता।"

'चमेलि ;श्रेंउपदनउ `चचण्द्ध
'दैंणा ,सरसों . ठतेंपबं रनदबमंद्ध

अर्थात् 'यह रास्ता कहाँ जाता होगा, क्या देवी के मंदिर में तो नहीं! विरहन अपने पति की प्रतीक्षा में कहती है कि तेरी राह देखते–देखते पूरी उम्र मायके में कट गई। जहाँ हम प्रेमालाप कर बैठते थे वहाँ ऋतु परिवर्तन के अनुसार जाई, चमेली व दैणा पल्लवित, पुष्पित हुई पर तुम न आय..!'

लोकगायक स्व० श्री प्रहलाद सिंह मेहरा ने पहाड़ की नारी के असीम कष्टों को कितने सुन्दर शब्दों में व्यक्त किया है–

"पहाड की चेली लै, पहाड़ की ब्वारी लै
कबै नि खाया द्वि र्वाटा सुख ले...
असोज में धान' काटंणा
चैत मैं ग्यूँ ' टिपणां।"

'धान ;व्वलं `जपअंद्धए
' ग्यूँ ;ज्तपजपबनउ `मेजपअनउद्ध

अर्थात् पर्वतांचल कुमाऊ की लडकी, बहू, बेटियों ने कभी भी सुख चैन से दो रोटियाँ नहीं खायी होंगी। ... आश्विन में धान की कटाई हो या चैत्रमास में गेहूँ की फसल बालियों सहित टीपना या काटना।

लोकजीवन को जैव विविधता के साथ क्षोर–नीर की तरह संयोजित करने में लोकगीतां की कितनी सुन्दर छटा दृष्टव्य है स्व० हीरा सिंह राणा के कंठ से निःसृत यह लोकगीत भला कैसे विस्मृत किया जा सकता है–

"कै भली मान्यौछ – हो हमार पहाड़ा
खाली लो जुम्हवा, खड़, बेड़ू, ' दाड़िमा'
असोजा का मैंण कामा चुट पड़ी जानी
क्वे मन्डू, झुंगर', कौणी', धान', कै लवानी..."

' बेड़ू ;थ्पबने चसंउंसं थ्वेाएडवतंबमंमद्ध
' दाड़िमा ;च्नदपबं हतंदंजनउ स्ण्द्ध
' झुंगर ;म्बीपदवबीसवं बतनेहंससप स्ण्द्ध
' कौणी धान ;ैमजंतपं पजंसपबं ;स्ण्द्ध च्ण्ठमंनअण्द्ध

भाव है कि 'कितना अच्छा लगता है हमारा पहाड़... लोग बेड़ू, दाड़िम आदि का सेवन करते हैं। अश्विन माह में जब बहुत अधिक काम पड़ता है कोई मडुवा ;म्समनेपदम बवतंबंदं ;स्ण्द्ध ळंमतजदण्द्ध, झुंगुर ;म्बीपदवबीसवं बतनेहंससप स्ण्द्ध, कौणी धान ;ैमजंतपं पजंसपबं ;स्ण्द्ध च्ण्ठमंनअण्द्ध आदि की कटाई करता है।'

स्व० गोपाल बाबू गोस्वामी जी के गीत से कौन लोक–मानस परिचित नहीं होगा–

"घुघूती नी बास, आमे' की डाई' में..."

' आमे ;आम ड्डंहदपमित पदकपबंद्ध
' डाई ;पेड़ की टहनीद्ध

विरहन घुघुत ;ैचपसवचमसपं `नतंजमदेपेद्ध नामक पक्षी से अपनी पीड़ा साझा कर गा उठती है, हे घुघुती ;ैचपसवचमसपं `नतंजमदेपेद्ध तुम आम ;डंहदपमितं पदकपबंद्ध के पेड़ की डाली में बैठकर इस तरह वियोग की धुन न सुनाओ, मुझे अपने प्रियतम की याद हावी हो आती है। तुम तो जानते हो वह परदेश–बर्फीले लद्दाख में हैं।

कुमाउनी लोकगायिका स्व० श्रीमती कबूतरी देवी की मखमली आवाज भला किस लोक संगीत प्रेमी को अपनी ओर आकर्षित नहीं करेगी। जिसमें नारंगी ;ब्पजतने `पदमदेपेद्ध के दाने को लोक जीवन से जोड़ते हुए जैव विविधता की गहन दृष्टि का परिचय दिया है–

"आज पैनी जाँव–जाँव, भोल पैनी जाँव–जाँव
पोर छिनत न्है जूला आ... आ...

इस्टेशन में पुजै दै मैलाई, पछिल विराणा ह्वे जूला आ... आ...
रुख लागी नारिंगै दाणि मि किलै झणैछी..."

कितनी अच्छी प्रतीकात्मक पंक्तियाँ हैं कि पेड़ पर लगा नारंगी का दाना नीचे क्यों गिरा होगा ? क्या लोक दृष्टि है इतनी सुन्दर पर्यावरणीय समन्वयता है।

कुमाउंनी लोकगीतों की सृष्टि करने में प्रायः पुरुष की अपेक्षा नारी का अवदान अधिक है, प्रेरणा बिन्दु है वह। स्वाभाविक है कि वह पुरुष से अधिक भावुक व सहृदय है। साथ ही उसे सुख–दुःख के अनुभव भी अपेक्षाकृत अधिक व गहन है। अतः अधिकतम लोकगीतों की सृष्टि का श्रेय भी उसी को है। ये लोकगीत हमारे कुमाउंनी लोकसंस्कृति के प्रतीक हैं। भौतिक सभ्यता इनके शब्दावली में परिवर्तन तो कर सकती है। इतिहास की सत्यता असंदिग्ध रहेगी। लोकजीवन का सजीव प्रतिविम्बन करने में सफल कुमाउनी लोकगीत स्वाभाविकता को लिए हुए हैं। इसीलिए कुमाउनी के लोकगीत जैव विविधता ;ठपवकपअमतेपजलद्ध के साथ ही स्त्री समाज के साथ भी अटूट सम्बन्ध के साथ दिखती है। वह लोक भावनाएं प्राकृतिक तारतम्यता के साथ उसकी धड़कनों में समाहित हैं, वेदना, दया, माया, ममता एवं स्नेह की वह सजग प्रतिमूर्ति है, जिसमें विविध सामाजिक उपादानों के साथ मानवीय रागों का सुन्दर प्राकृतिक सन्तुलन दिखाई देता है।

पर्यावरणीय जैव विविधता का संदेष देता यह सदाबहार कुमाउनी लोकगीत कालजयी है–

सरकारी जंगल लछिमा बाँजा
निकाट लछिमा बाँजा' निकाट...

' बॉज *;फनमतबने समनबवजतपबीवचीवतं ।ण्ब्ंउनेद्ध*

उत्तराखण्ड. की पहचान, राज्य स्वर्ण वृक्ष के नाम से प्रसिद्व बॉज *;फनमतबने समनबवजतपबीवचीवतं ।ण्ब्ंउनेद्ध* के वृक्ष का संरक्षण का संदेष देता यह लोकगीत सदाबहार रूप में सर्वस्वीकार्य है।

लोकजीवन से जोडते ये लोकगीत हमारी जैव विविधता समृद्वि की ओर भी संकेत करते हैं। और भी

पार का भीडा कोछि घस्यारी, मालू वे तू मालू' काटा,
मालू भैसी ब्यौ रैंछि थोरि है रैंछि, मालू वे तू मालू काटन दे।

' मालू *;ठंदमतं अीसपप ;ॅपहीज – ।तदण्द्ध ठमदजीण्द्ध*

लोकगायक हीरा सिंह राणा जी को यह लोकगीत लोकप्रियता के उच्च स्तर को आज भी स्पर्ष करते है।

रंगीली बिन्दी घाघरि काई, धोती लाल किनार वाई
आइ हाय हाय रे मिजाता, होई–होई रे मिजाता।
कि मुखी प्योली फूलै वाई, यूँ आखँम काई फेरिया स्याई।

आ लिली बाकरि लिली छयू छयू, अलिल लि लि......
ते बाकरि बाघ लिजौ रे त्विल उज्याड़ खाय।

' बाकरि *;ब्ंचतं ंमहंहतने ीपतबनेद्ध*
' बाघ ;च्ंदजीमतं जपहतपेद्ध

प्योली के फूल के समान पीलापन लिए नायिका का मुखमण्डल तथा दूसरे के चरागाह, खेत, खलिहान में अनधिकृत रूप से जाने वाली पालतू बकरी को लोकगीत के माध्यम से मनोरंजन के साथ–साथ जैव वैविध्य समृद्वि कसे दर्षाने का सफल प्रयत्न किया गया है।

प्रहलाद मेहरा जी का हालिया गीत :

ऐजा रे मेरा दानपुरा।

ध्वाग, काकड,' दाडिम' खजाकृ।

'काकड़ *;च्येजंबपं पदजमहमततपउ ‟जमूंतज मग ठतंदकपे द्ध*

'दाडिम *;च्नदपबं हतंदंजनउ स्ण्द्ध*

जनपद बागेष्वर के मल्ला दानपुर पट्टी की प्राकृतिक समृद्वि व संस्कृति को प्रदर्षित करता यह लोकगीत जिसमें वह प्रवासी से अपेक्षा कर रहे हैं कि मक्के, ककड़ी, दाड़िम आदि से समृद्व यह क्षेत्र है जँहा आकर हर कोई तृप्त होता है ऐसी भौगोलिक सुन्दरता है दानपुर की।

सातूँ आठूँ व्रत का गीत देखिए :

ल्याओ चेलियो कुकुड़ी, का फूल माकुड़ी का फूल।

अमर लोकगायक गोपाल बाबू गोस्वामी का यह लोकगीत विरहन की मनोदषा का मार्मिक चित्रांकन करता है जिसमें विरहन वासुरी की धुन को सुनकर अपनी स्मृतियों को धनीभूत कर लेती है–

कैले बजे मुरूली औ बैणा

ऊँचा ऊँचा डांडयू मा ।

कुमाउनी लोकगीतों की प्रासंगिकता एवं महत्ता न केवल साहित्यिक सांस्कृतिक तथा राश्टोय दृश्टि से ही निर्विवाद सर्वस्वीकार्य है वरन् वैज्ञानिक दृश्टि से भी बहुत महत्वपूर्ण है। सरल षब्दों में सहज भावों में जन सामान्य तक पहुँच रखने वाले कुमाउँनी लोकगीतों में वर्णित पषु–पक्षी, पेड़–पौधे, ऋतु–फसल जल–जंगल, जमीन का गाहे–बाहे चित्रण हमें उस क्षेत्र विषेश की विशयगत संदृश्टि व चेतना का भी आभास–ज्ञान कराती हैं। वन्य जीवन एवं जल जीवन का एक दृश्टव्य :

हमारो कुमाऊँ बड़ो सीधो सादो, लागन छ प्यारो प्यारो

रूख में न्योली बासन छ, छम–छम लागन छो खुटो प्यारी हो।

कालि गंगा हो कालो माछो, कैलो कैलो छैलो–छैलो।

भाव है कि हमारा कुमाऊँ बड़ा ही सोधा सादा है कितना प्यारा प्यारा लगता है यहाँ पेड़ में न्योली नामक पक्षी बोलती है कितनी सुन्दर है काली नदी और उसमें रहने वाली काली मछली।

और देखिए, भले ही सुपारी इस जलवायु में नही होती तथापिः

हई हई हई सुपारी खाई खइ खई सुणमाया

क्या रामरो घाम लागौ छो

नन माणि मडुवा भरो, ग्यूँ भरो ठुल माणि

दिन गिना झुरी जै रौली मौत्यू कसी दाणि।

यह नेपाली पुट लिए रसिक शृंगार गीत है जिसमें यहाँ की जलवायु में होने वाली गेहूँ, मडुवा जैसी फसलों के साथ माणि (खाद्वय समाग्री मापने का लकडी द्वारा बनाया गया बर्तन) के मापक को भी वर्णित किया गया है।

झोड़े कुमाऊँ के सामूहिक नृत्य गीत है। ऋतु वर्णन का यह प्रसिद्व लोकगीत जैव विविधता की समृद्वि को दर्षाता है–

बेड़ू पाको बारमासा, ओ नरैण काफल पाको चैता मेरी छैला

रौ की रौतेली ओ नरैण माछा मारा गीड़ा मेरी छैला

बाकरै की बसी ओ नरैण बाकरी की बसी, मेरी छैला।।

बारहमासों मे ऋतुवार पकने वाला फल काफल तथा बेडू *;थ्पबने चंसउंजं थ्वतो्ण्द्ध* के वर्णन के साथ जल तुरई तथा पालतू पषु बकरी *;ब्ंचतं 'महंहतने 'पितबनेद्ध* को भी लोकगीत में सम्मानजनक स्थान दिया गया है।

कुमाऊँनी लोकगीतों की एक गायन पद्वति है न्योली जो घने वन प्रान्तों में गाये जाने वाले विरहानुभूति के निकट हैं अभी केवल बासुरी की धुन के रूप में आलाप षैली में इन्हें सुना जा सकता है। न्योली सोरयाली व रीठागाड़ी तर्ज में गाई जाती है। इनका प्रमुख विशय शृंगार है। वार्णिक लयाधार की दृश्टि से नयोली को कुमाऊँनी छन्दों की रानी भी कहा जाता है कुछ न्यौलियाँ जिनमें जैवविविधता के दर्षन होते हैं उनमें से कतिपय उदाहरण निम्नवत है–

नान दाणों दाड़िम को ठुल दाणों दा्ख को, हिटने वाटा बोलि जाछी बचन लाखों में

तिल पेरो, भगीरो पेरसे, कोल्हू का बिचौनी , हरिया काकड़ जसि मेरा हिया पौनि।

कावा बासे चण्डाक में, घ्वाग भया औत, खाणी पिणी कि न्हातिन, माया पड़ी भौत।

ऐल काटिया केलि कि घड़ी, भौल लैपाकली, मैं जाछू मैत की तिर त्वै सुरा लागली।

काचि जांठी धिंघारू की गाड़–गाड़ै खलीकीछ, वी आया आया उदासी दिना, मैं तो माँ ढलकीछ।

सरसों फूलों ढक–बक धनिया फूलो रंग, त्वो सुवा जाइया बटि मन छ उड़भंग।

गंगा ज्यू का रेवाड़ै मै सरपै ले नायो, निरमोही सुवा लै मेरा फरकी नै चायौ।

रूख जान्या गुनी वानर गोद में छै नि हो, जैको सुवा परदेष, कसिके रौली हो।[02]

कुमाऊँ हिमालय की वानस्पतिक विविधता बहुमूल्य राश्टोय निधि है। प्रकृति ने मुक्त हस्तों से अपने अनुपम उपहार कुमाऊँ अंचल को प्रदान किये हैं। चीड़ *;च्पदने* तवगइनतहीपप *'तहण्द्ध*, बाँज *;फनमतबने समनबवजतपबीवचीवतं ।ण्ब्ंउनेद्ध*, देवदार *;ब्मकतने* कमवकंतं *;त्वगइण मग क्ण्क्वदद्ध ळण्क्वदद्ध*, उतीस *;।सदने दमचंसमदेपे क्ण्क्वदद्ध* फयाँट *;फनमतबने हसंनबं जीनदइण्द्ध*, काफल *;डलतपबं मेबनसमदजं ठनबीण्भ्ंउण मग क्ण्क्वदद्ध*, बुरास, साल, पयया *;च्तनदने बमतेंमपकवे डंगपउण्द्ध*, भीमल *;ळतमूपं वचजपअं श्रण्त्ण्क्तनउउण मग ठनततमजद्ध*, तिमुल *;थ्पबने 'नतपबनसंजं स्वनतण्द्ध*, दूब, बास *;ठंउइनें इंउइवे ;स्ण्द्ध टवेद्ध*, सेमल *;ठवउइंग बमपइं स्ण्द्ध* आदि के वृक्ष प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। ज्ञात–अज्ञात पादपीय औशधियुक्त जड़ी–बूटीया, विविध सतरंगी फल–फूल, सब्जी रवि, खरीफ, तिलहन, दलहन व जायद की फसलें। पालतू एवं जंगली पषु–पक्षी, तेंदुआ *;च्ंदजीमतं चंतकनेद्धए* हाथी *;म्समचीं उंगपउनेद्धए* बराह *;'ने 'बतवद्धि*, रीछ–भालू *;डमसनतेने नतेपदनेद्धए* गीदड़ *;ब्ंदपदप बंदपदंद्ध*, साही, सियार *;ब्ंदपदप बंदपदंद्ध*, घुरड़, काँकड़ *;डनदजपंबने उनदजरांद्ध*, चितल *;।गपे 'गपेद्धए* हिरण *;ब्मतअपकंमद्धए* बारसिंगा *;त्नबमतअने कनअंनबमसपपद्धए* बन्दर *;ब्मतबवचपजीमबपकंमद्धए* लंगूर *;'मउदवचपजीमबने मदजमससनेद्धए* गौला, सहित जंगली मुर्गी *;श्रनदहसमवृिसद्ध*, चील *;डपसअने उपहतंदेए* ज्ञपजमद्धए गरूड़ *;ळंतनकंए* जीम अींदं ;उवनदजद्ध वि*टपींदनद्ध*, कौवा *;ब्वतअने उवदमकनसवपकमेद्ध*, बाँज *;म्हसमद्धए* उल्लू *;ठनइव इमदहंसमदेपेद्धए* घुघुती *;बैंसबवचींचे पदकपबंद्धए* मैना *;।बतपकवजीमतमे जतपेजपेद्ध* गौरेया *;चैंमत कवउमेजपबनेद्धए* तीतर–बटेर *;व्तजलहवतदपे चवदकपबमतपंदनेद्धए* चकोर बेनामत *;।समबजवतपे बीनांतद्धए* कठफड़ुवा, चिलये, कोक्कास, गुप्टी, कोयल *;म्नकलदंउले 'बवसवचंबमनेद्ध*, बुलबुल *;च्लबदवदवजने इंतइंजनेद्ध* , घुग्घु, मोनाल *;स्वचीवचीवतने पउचमरंदनेद्ध* आदि प्राणियों की जैव विविधता को लाकगीतों में सहजता से सुना–समझा जा सकता है कि हमारे लोकगीत मात्र मनोरंजन की बानगी भर नहीं है वरन् इन लोकगीतों में पर्यावरणीय, पारिस्थितिकीय सन्तुलन के सुन्दर चक्रोय ऋतुगत वर्णन ध्यानाकर्शण के आधार है न केवल कुमाऊनी लोकगीत वरन यहाँ के समस्त लोकसाहित्य में भी इस जैव सम्पदा के यत्र–तत्र दर्षन गायकों, कृतिकारों द्वारा किया–कराया जाता रहा है।[03,04]

कुमाऊँ के हदयस्थल सांस्कृतिक नगरी आलम षहर अल्मोड़ा की प्राकृतिक समृद्वि, सुन्दरता एवं जैव विविधता को महात्मा गाँधी जी ने यंग इंड़िया में जुलाई 11 सन 1929 में लिखा था:

ष प्द जीमेम ीपससे दंजनतमे ीवेचपजंसपजल मबसपचेमे ेसस उंद बंद मअमद कवण् जीम मदबींदजपदह इमंनजपमे वि जीम भ्पउंसंलें जीमपत इतंबपदह बसपउंजम ेदक जीम इमतजीपदह हपअमद जींज मदअमसवचमे लवन समंअम दवजीपदह उवअम जव इम सवववेपदहण् ष ूवदकमत ूीमजीमत जीम `बमदमल वि जीमेम ीपससे ेदक जीम बसपउंजम ेतम जव इम नतचतपेमकए पि मुनंसमकए इल ेदल वि जीम इमंनजल `चवजे वि जीम ूवतसकण् ।जिमत ींअपदह इममद दमंतसल जीतमम ूममो पद ।सउवतं भ्पससेण् ष ेउ उवअम जींद मअमत ेउंमक ूील वनत चमवचसम दममक हव जव म्नतवचम पद `मंतबी वि ीमंसजीण् [05]

लोकगीतों की स्वरलहरियों से हिमाच्छादित पर्वत श्रंखलाओं की गोद में सुदूर फैली घाटियाँ उत्तंग गिरी कानन में बसी यह संस्कृति रह–रह कर बरबस अपनी ओर अनायास ही आकर्शित करती है। इन लोकगीतों को सुनकर आभास होता है कि कितनी बहुविविधता लिए हुए हैं हमारें लोकगीत। [06]

वृक्षो का अवैध पातन, जड़ी बूटियों का अवैज्ञानिक दोहन, खनन के नाम पर माफियाराज, जंगली जीवों की हत्या, जल–जीवन को मनोरंजन के नाम पर निषाना नही बनाया जा सकता । वन्य जीव रक्षा, वन्य सम्पदा की रक्षा हेतु कड़े नियम वन विभाग द्वारा गतिमान हैं। फिर भी दावानल का दंष झेलती जैव सम्पदा सभी के लिए विचारणीय प्रष्न है। रामगंगा व कोसी नदियों के बीच एक 200 वर्ग मील का जंगल जंगली जानवरों के लिए 1953 से सुरक्षित रखा गया है। यहाँ जीव जन्तु स्वच्छन्द रहेंगे। कोई उन्हें मार न सकेगा।

जिम कार्बेट पार्क का उल्लेख अनेक इतिहासकारो ने किया है उसकी जैव समस्या का वर्णन लोकगीतों में सर्वविदित है। कुमाऊनी लोकगीतों के माध्यम से मानविकी तथा सामाजिक विज्ञान के साथ–साथ लोक तकनीकी, वानिकी, कृशि, प्रर्यावरण तथा चिकित्सा षास्त्र जैसे वैज्ञानिक विशयों का पर्याप्त ज्ञान उपलब्ध हो सकता है तथा इन लोक गीतों के माध्यम से ही उक्त विशयक वैज्ञानिक प्रसार भी किया जा सकता है। [07]

## समाहार :

निश्कर्शतया कहा जा सकता है कि कुमाउनी संस्कृती के सामाजिक लोकजीवन में त्यौहार, उत्सव परम्परा या प्रथा, रीति के विशय इतने विस्तीर्ण हैं कि उन्हें सीमित दायरें में रखना अनुचित सा होगा। प्रमुखतया प्रकृति मे विविध जड़–चेतन उपादानों को अपने लोकगोतों की सुरलहरियों में पिरोये यह अंचल जैवविविधता के संरक्षण, संवर्धन एवं जागरूकता का संदेष देते प्रतीत होते हैं। कुमाउंनी लोकगीत लोक को साथ लेकर चलते हैं। जनमन की हार्दिक भावनाओं का आलाड़न –विलोड़न को यथार्थ अभिव्यक्ति देते यह लोकगीत मानव की मनोवैज्ञानिक प्रस्तुति भी है। धर्म, दषन, विज्ञान के प्रति व्यश्टि नहीं समश्टिगत. आस्था इनमें पग–पग पर प्रतिध्वनित होती है।

भौतिक विकास के मायावी दानव के कुप्रभाव से कुमाऊॅं की सुरम्य जैव विविधता भी अछुती नहीं है। प्राकृतिक सन्तुलित सम्पदा में अनावष्यक मानवीय हस्तक्षेप–गतिविधियों ने जैव विविधता के समक्ष अनेक यक्ष प्रष्न खडे. कर दिये हैं, जलवायु परिवर्तन के कुप्रभाव आये दिन कुमाऊॅं हिमालय में भी देखे जा सकते हैं। वैष्विक तापवृद्वि ने सदानीरा हिमसरिताओं सहित उससे जुड़े जल–जीवन को दुश्प्रभावित किया है। उद्योगों के लिए वनों की कटाई, खेतों का अकृशण, जलाषयों का सुखना, नदियों के जलस्तर में गिरावट, कृशि योग्य भूमि में कार्बन तत्व का ह्रास, अति उपभोक्तावाद, जनसंख्या घनत्व तथा दुग्ध उत्पादनों व सौन्दर्य प्रसाधनों हेतु प्रयुक्त एकल प्रयोग युक्त प्लास्टिक, ने कुमाऊँ की जीवनदायनी नदियों के तटों को प्रदूशित करने का काम किया है। आषा है कि इस पीढ़ी के कुमाउनी लोकगीतों में भी पर्यावरण संरक्षण, जैव विविधता का संदेष देते नये लोकगीत लोकवाणी के रूप में लोकगीतों द्वारा हमारे सम्मुख आयगे। हमारी भौतिकतावादी अत्याधुनिक जीवन षैली से प्रभावित होती जैव विविधता को संरक्षित करनें के स्वर नई–नई लोक रचनाआं में सुनने को मिलेंगे। कुमाऊँ हिमालय के लोकगीतों में घटते जंगलों के कारण ही मनुश्य एवं जंगली पषुओं के मध्य संघर्श आये दिन समाचारों की सुर्खिया बनी रहती हैं लोकगायक इस ओर भी

अपनी रचनात्मक दृश्टिपात करेंगे ऐसी आषा हं। कुमाउनी लोकगीतों में मानव वन्यजीव संघर्श लकडी तस्करी, जंगली उत्पादों की स्नियोजित चोरी एवं कालाबजारी, बनपातन आदि कारणों से भी जंगली हिसंक पषुओं का मानव बस्ती में अतिकमण बढा़ है क्योकि उसके घर को या तो आग के हवाले कर दिया गया या हमनें वहाँ अनाधिकार प्रवेष किया। अपरिमित जल भण्ड़ार युक्त कुमाऊ हिमालय के संरक्षण के लिए लोकगीतों के माध्यम से भी जगाने का प्रयास किया गया है। विषाल पर्वत माला में हमारी पर्यटन के नाम पर मषीनी घुसपैठ़ बाधों की भारी योजनाएँ हमें कहा ले जायेगी पता नही ? पर हमारे इस राश्ट्र प्रहरी हिमालय की मैंकतोली, नंदादेवी, चौखम्वा, पंचाचूली, नंदाखट, त्रिषूल, नंदाघ्ंघटी, मिलम, नामिक, पिण्डरी, कफनी, सुन्दरढुंगा, मालपा व धाकुड़ीधार जोहार, दारमा, व्यास, चौदास, मुनस्यारी में सुरम्य जैव विविधता युक्त स्थली का सुन्दर चित्रण कुमाउनी लोक गायकों ने अब तक बखूबी किया है। फौजी ललित मोहन जोषी की गायकी की बारीकी देखिए –

हिट कमु नहै जानु मिलम जौहार..........

हिमाला को, हिमाला को

हिमाला को ऊँचा ड़ाना प्यारौ मेरो गॉव

रंगीलो कुमाऊँ मेरो छबीलो गढ़वाल

गोपाल बाबू के इस गीत को जैवविविधता के संरक्षण का सिरमौर गोत क्यों न माना जायें।

## सन्दर्भ सूची :

01- काला जनार्दन प्रसाद, गढ़वाली भाशा और उसका लोक साहित्य, गढ़वाल की भौगोलिक रूपरेखा, पृ0 12, समय साक्ष्य प्रकाषन देहरादून।
02- भाकुनी दिवान सिंह–संकलकर्ता–लेखक : उत्तराखण्ड़ की सांस्कृतिक धरोहर, पृ0उ73 कुमाउनी साहित्य प्रकाषन–हल्द्वानी नैनीताल।
03- ीजजचेरूध्ध्ूूणेंइकावीेणबवउध्कपबजपवदंतलधीपदकप.मदहसपेीध्उमंदपदह.पद.मदहसपीरुहववहसमत्रऋअपहदमजजमण
04- टूंजए ळण्  ̄ण – ल्ण च्ण ̄ण ̈चंदहजमल ;1987द्ध. । बवदजतपइनजपवद जव जीम मजीदवइवजंदल वि ।सचपदम तमहपवद वि सनउंवदण *श्रण म्बवदण ठवजण ए 11रू 139.148ण*
05- पाण्ड़े बी0 डो0, कुमाऊँ का इतिहास, पृ0 03, ष्याम प्रकाषन अल्मोड़ा।
06- पाण्ड़े बी0 डो0, कुमाऊँ का इतिहास, पृ0 04, ष्याम प्रकाषन अल्मोड़ा।
07- भट्ट दिवा, उत्तराखण्ड़ की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति, कुमाउँनी लोकगीतों के वैज्ञानिक सन्दर्भ . पृ0 70 प्रकाष पब्लिकेषन अल्मोड़ा।